विषय- शारीरिक शिक्षा (बी०ए०/बी०एस०सी० प्रथम वर्ष)

यूनिट - III Topic : पाचन तन्त्र (3rd Paper)

Prepared By - Dr. SARITA YADAV, Associate Professor, Deptt. Of Physical Education,
Arya Kanya Mahavidyalaya, Hardoi, UP .

पाचन तंत्र

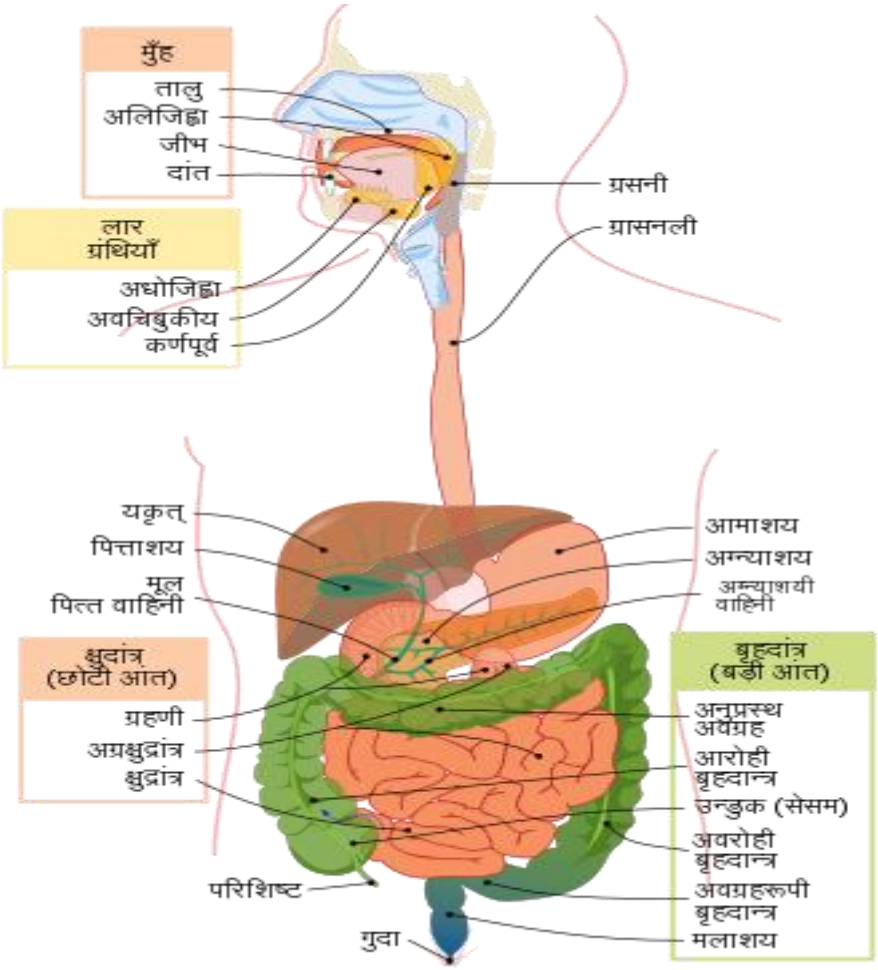

मानव के पाचन तंत्र में एक आहार-नल और सहयोगी ग्रंथियाँ (यकृत, अग्न्याशय आदि आहार-नाल, मुखगुहा, ग्रसनी, ग्रसिका, आमाशय, छोटीआंत, बड़ी आंत, मलाशय और मलद्वार से बनी होती है। सहायक पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथि, यकृत, पित्ताशय और अग्नाशय हैं।

❖ **पाचन**- आहार पदार्थों के विशेष घटक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज लवण और जल हैं। सभी खाद्य पदार्थ इन्हीं घटकों से बने रहते हैं। किसी में कोई घटक अधिक होता है, कोई कम। हमारा शरीर भी इन्हीं अवयवों का बना हुआ है। शरीर का 2/3 भाग जल है। प्रोटीन शरीर की मुख्य वस्तु है, जिससे अंग बनते हैं। कार्बोहाइड्रेट ग्लूकोज़ के रूप में शरीर में रहता है, जिसकी मांसपेशियों को सदा आवश्यकता होती है। वसा की भी अत्यधिक मात्रा शरीर में एकत्र रहती है। विटामिन और लवणों की आवश्यकता शरीर की क्रियाओं के उचित संपादन के लिये होती हैं। हमारा शरीर ये सब वस्तुएँ आहार से ही प्राप्त करता है। हाँ, आहार से मिलने वाले अवयवों का रासायनिक रूप शरीर के अवयवों के रूप से भिन्न होता है। अतएव आहार के अवयवों को शरीर पाचक रसों द्वारा उनके सूक्ष्म घटकों में विघटित कर देता है और उन घटकों का फिर से संश्लेषण करके अपने लिये उपयुक्त अवयवों को तैयार कर लेता है। यह काम अंगों की कोशिकाएँ करती हैं। जो घटक उपयोगी नहीं होते, उनको ये छोड़ देती हैं। शरीर ऐसे पदार्थों को मल, मूत्र, स्वेद और श्वास द्वारा बाहर निकाल देता है।

पाचन का प्रयोजन है आहार के गूढ़ अवयवों को साधारण घटकों में विभक्त कर देना। यह कार्य मुँह में लार रस द्वारा, आमाशय में जठर रस द्वारा, ग्रहणी में अग्न्याशय रस (pancreatic juice) तथा पित्त (bile) द्वारा और क्षुंदात्र में आंत्ररस (succus entericus) द्वारा संपादित होता है। पाचन की सम्पूर्ण प्रक्रिया निम्न चरणों में सम्पन्न होती है -

- **आरम्भिक पाचन-**

मुख में आहार दाँतों द्वारा चबाकर सूक्ष्म कणों में विभक्त किया जाता है और उसमें लार मिलता रहता हैं, जिसमें टायलिन (Ptylin) नामक एंज़ाइम मिला रहता है। यह रस मुँह के बाहर स्थित कपोलग्रंथि और अधोहन्वीय तथा अधोजिह्व ग्रंथियों में बनता हैं। इन ग्रंथियों से, विशेषकर आहार को चबाते समय उनकी वाहनियों द्वारा, लार रस मुँह में आता रहता है। इसकी क्रिया क्षारीय होती है। उसके टायलिन एंजाइम की रासायनिक क्रिया विशेषकर कार्बोहाइड्रेट पर होती हैं, जिससे उसका स्टार्च पहले डेक्सट्रिन (dextrin) में और तत्पश्चात् ग्लूकोज़ में परिवर्तित हो जाता है। साधारण ईख की चीनी में भी यही परिवर्तन होता है। आहार के ग्रास को गीला और स्निग्ध करना भी लार का मुख्य कार्य हैं, जिससे वह सहज में निगला जा सके और पतला ग्रास नाल में होता हुआ आमाशय में पहुँच जाय।

निगलने (deglutition) की क्रिया मुख के भीतर जिह्वा की पेशियों तथा ग्रसनी की पेशियों द्वारा होती है। जिह्वा की पेशियों के संकोच से जिह्वा ऊपर को उठकर तालु और जिह्वापृष्ठ पर रखे हुए ग्रास को दबाती है, जो वहाँ से फिसलकर पीछे ग्रसनी से चला जाता है। तुरंत ग्रसनी की पेशियाँ संकोच करती हैं और ग्रास घांटीढक्कन (epiglottis) पर होता हुआ ग्रासनली (oesophagus) में चला जाता है, जहाँ उसकी भित्तियों में स्थित वृत्ताकार और

अनुदैर्घ्य सूत्र अपने संकोच और विस्तार से उत्पन्न हुई आंत्रगति द्वारा उसको नाल के अंत तक पहुँचा देते हैं और ग्रास जठरद्वार द्वारा आमाशय में प्रवेश करता है।

- **आमाशय में**-

आमाशय में पाचन की क्रिया जठररस द्वारा होती है। आमाशय की श्लेष्मल कला की ग्रंथियाँ यह रस उत्पन्न करती हैं। जब आहार आमाशय में पहुँचता है तो यह रस चारों ओर की ग्रंथियों से आमाशय में ऐसी तीव्र गति से प्रवाहित होने लगता है जैसे उसको उंडेला जा रहा हो। इस रस के दो मुख्य अवयव पेप्सिन (pepsin) नामक एंज़ाइम और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल होते हैं। पेप्सिन की विशेष क्रिया प्रोटीनों पर होती है, जिसमें हाइड्रोक्लोरिक अम्ल सहायता करता है। इस क्रिया से प्रोटीन पहले फूल जाता है और फिर बाहर से गलने लगता है। इस कारण ग्रास का भीतर का भाग देर से गलता है। इसमें लार के टाइलिन एंज़ाइम की क्रिया उस समय तक होती रहती है जब तक लार का सारा क्षार आमाशय के आम्लिक रस द्वारा उदासीन नहीं हो जाता।

जठरीय रस की क्रिया द्वारा प्रोटीन से पहले मेटाप्रोटीन बनता है। फिर यह प्रोटियोज़ेज़े (protioses) में बदल जाता है। प्रोटियोज़ेज़ फिर पेप्टोन (peptone) में टूट जाते हैं। इससे अधिक परिवर्तन नहीं होता।

जठरीय रस में दो और एंज़ाइम भी होते हैं, जिनको ऐमाइलेज़ (amylase) और लायपेज़ (lypase) कहते हैं। ऐमायलेज़ कारबोहाइड्रेट को गलाता है और लायपेज़ वसा को। इस में दूध को फाड़नेवाला एक और एंज़ाइम रेनिन (renin) भी होता है। इसमें हलकी जीवाणुनाशक शक्ति भी होती है।

जठरीय रस का स्राव मुख्यतया तंत्रिकामंडल के अधीन है। शरीरक्रिया विज्ञान के विख्यात रूसी विद्वान पैवलॉफ़ (Pavlov) के प्रयोगों ने इस संबंध में बहुत प्रकाश डाला है। उनसे प्रमाणित हो चुका है कि आहार पदार्थों की सुंगध नाक से सूँघने और उनको नेत्रों से देखने से रस का स्राव होने लगता है। यही कारण है कि उत्तम आहार पदार्थों के बनने की गंध से ही भूख मालूम होने लगती है तथा उनको देखने से क्षुधा बढ़ जाती है। जीभ पर लगाने से तुरंत खाने की इच्छा होती है। यदि आहार पदार्थ उत्तम या रुचिकर नहीं होते तो भूख मर जाती है। ऐसे आहार का पाचन भी उत्तम रीति से नहीं होता। उससे रस का स्राव भी कम होता है। जठरीय रस की क्रिया विशेषकर प्रोटीन पर होती है। मांस, अंडा, मछली, दूध के पदार्थों आदि के आमाशय में पहुँचने पर रस का स्राव होता हैं। नमक, बरफ या कंकड़ आदि खाने को दिए जायें तो स्राव नहीं होगा।

- **अग्न्याशय में पाचन (Pancreatic Digestion)**-

पाचन से अग्न्याशय (pancreas) और यकृत इन दो बड़ी ग्रंथियों का बहुत संबंध है। अग्न्याशय में अग्न्याशय रस बनता है। यह बहुत ही प्रबल पाचक रस है, जिसकी क्रिया

प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट तथा वसा तीनों घटकों पर होती है। इसका निर्माण अग्न्याशय ग्रंथि की कोशिकाओं द्वारा होता है और सारे अग्न्याशय से एकत्र होकर यह रस एक वाहिनी द्वारा ग्रहणी में पहुँचता है। पिताशय से पित्त को लानेवाली वाहिनी इस अग्न्याशयवाहिनी से मिलकर सामान्य पित्तवाहिनी (bile duct) बन जाती है। उसी के मुख द्वारा अग्न्याशय और पित्त, दोनों रस, ग्रहणी में पहुँचते रहते हैं।

अग्न्याशयी ग्रंथि उदर में बाईं ओर आमाशय के पीछे स्थित है। इसका बड़ा सिर ग्रहणी के मोड़ में रहता है और उसकी पूँछ बाईं ओर प्लीहा तक चली गई है। इसका रंग कुछ मटमैला भूरा सा होता है। इसके सूक्ष्म भाग शहतूत के दानों के समान उठे हुए दिखाई पड़ते हैं।

अग्न्याशय रस की प्रबल क्रिया विशेषकर प्रोटीन पर होती है। उससे प्रोटीन बिना फूले हुए ही घुलने लगता है। इस रस की क्रिया क्षारीय होती है। इस कारण पहले क्षारीय मेटाप्रोटीन बनती है। तब मेटाप्रोटीन से प्रोटियोज़ बनते हैं। प्रोटियोज़ फिर पेप्टोन में परिवर्तित हो जाते हैं। अंत में पेप्टोन के विभंजन से ऐमिनो अम्ल (amino acids) बन जाते हैं, जो प्रोटीन के पाचन के अंतिम उत्पाद (end products) होते हैं। आमाशय से प्रोटीनों के पाचन के फलस्वरूप जो पेप्टोन आते हैं, वे भी ऐमिनो अम्लों में टूट जाते हैं।

अग्न्याशय रस के स्राव पर तंत्रिका मंडल का कोई नियंत्रण नहीं है। तंत्रिकाओं के उत्तेजन से रस की उत्पत्ति कम या अधिक नहीं होती। रस की उत्पत्ति उस समय प्रारंभ होती है जब आमाशय में पाचित आहार, जो अर्ध द्रव रूप का होता है, आमाशय से पायलोरिक छिद्र द्वारा निकलकर ग्रहणी (duodenum) में आता है। इस आम्लिक काइंम (chyme) के संपर्क से ग्रहणी को श्लेष्मल स्तर की कोशिकाओं में सिक्रेटिन (secretin) नामक रासायनिक वस्तु उत्पन्न होती है। यह वस्तु रक्त द्वारा अग्न्याशय की कोशिकाओं में पहुँचकर उनको रस बनाने के लिये उत्तेजित करती है और तब रस बनकर ग्रहणी में आने लगता है।

इस रस की दूसरी विशेषता यह है कि यदि ग्रहणी में पहुँचने से पूर्व ही अग्न्याशय की नलिका में इस रस को एकत्र कर लिया जाय, तो वह निष्क्रिय रहता है। उसकी प्रोटीन पर कोई क्रिया नहीं होती। जब वह ग्रहणी में आने पर आंत्रिक रस के साथ मिल जाता है, तभी उसमें प्रोटीन विघटित करने की प्रबल शक्ति उत्पन्न होती है। यह माना जाता है कि आंत्रिक रस का एंटेरोकाइनेज (enterokinase) नामक एंज़ाइम उसको सक्रिय कर देता है।

i-अग्न्याशयी रस के एंज़ाइम- ये निम्नलिखित हैं :

(1) प्रोटीन को ऐमिनों अम्ल में तोड़ देनेवाला एंज़ाइम ट्रिप्सिन (Trypsin) कहलाता है।

(2) ऐमाइलेज़ (amylase) की क्रिया कार्बोहाइड्रेट पर होती है। स्टार्च तथा गन्ने की शर्कराएँ माल्टोज़ में बदल जाती हैं जो आगे चलकर ग्लूकोज़ का रूप ले लेती हैं।

(3) लाइपेज़ (lipase) की क्रिया से वसा वसाम्ल (fatty acids) और ग्लिसरिन में विभंजित हो जाती है।

(4) कुछ रेनिन भी होता है, जो दूध को फाड़ता है।

ii-पित्त- उदर के दाहिने भाग में ऊपर की ओर शरीर की यकृत (liver) नामक सबसे बड़ी ग्रंथि है, जो पित्त का निर्माण करती है। वहाँ से पित्त पित्ताशय में जाकर एकत्र हो जाता है और पाचन के समय एक वाहिनी द्वारा ग्रहणी में पहुँचता रहता है। यकृत से सीधा ग्रहणी में भी पहुँच सकता हैं। यह हरे रंग का गाढ़ा तरल द्रव्य होता है। वसा के पाचन में इससे सहायता मिलती है।

- **क्षुदांत्र में पाचन-**

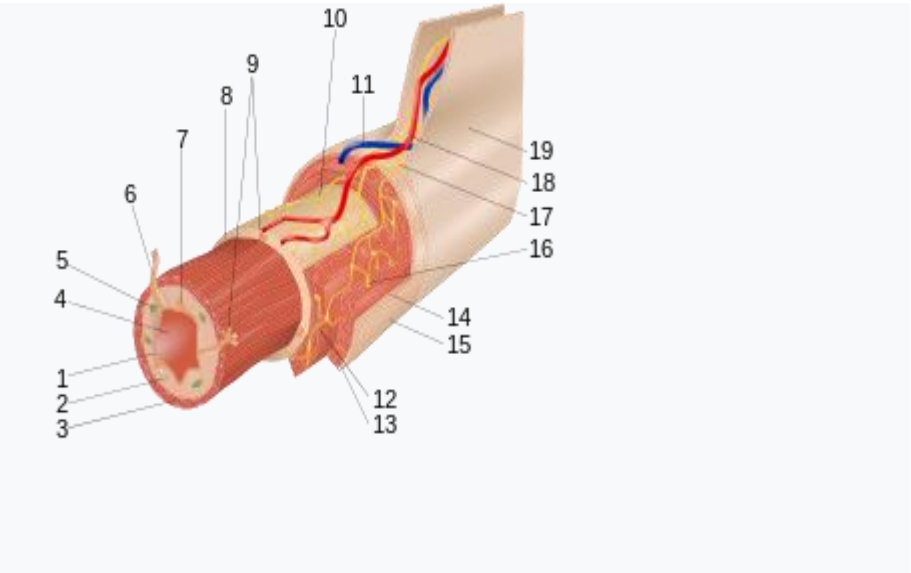

ग्रहणी से आहार, जिसमें उसके पाचित अवयव होते हैं, क्षुदांत्र के प्रथम भाग अग्रक्षुद्रांत (jejunum) में आ जाता है। इस समय वह शहद के समान गाढ़ा होता है और क्षुदांत्र में भली प्रकार प्रवाहित हो सकता है। यहाँ भी पाचन क्रिया होती रहती है। कुछ समय तक अग्न्याशयी पाचन जारी रहता है।

क्षुदांत्र के रस में भी पाचन शक्ति होती है। वह प्रोटीन को तो नहीं, किंतु प्रोटियोज़ और पैप्टोन को ऐमिनो अम्लों में तोड़ सकता है। पर उसकी विशेष क्रिया डिप्सिन ऐमोइलेज़

और लाइपेज एंज़ाइमों को सक्रिय बनाना है। पेवलॉफ का, जिसने सबसे पहले इस विषय में अन्वेषण किए थे, मत है कि आंत्र रस के मिलने से पहले ये तीनों एंज़ाइम अपने पूर्व रूप में रहते हैं और इसी कारण निष्क्रिय होते हैं। ट्रिप्सिन ट्रिप्सिनोज़न के रूप में रहती है। ऐमाइलेज़ और लाइपेज़ भी पूर्व दशा में रहते हैं। जब आंत्ररस आग्न्याशयरस में मिलता है, तो ट्रिप्सिनोजेन से ट्रिप्सिन बन जाती है और शेष दोनों एंज़ाइम भी सक्रिय हो जाते हैं। आंत्रिक रस के मिलने से पूर्व अग्न्याशय रस निष्क्रिय होता है।

क्षुदांत्र का कार्य विशेषतया अवशोषण (absorption) का है। इसकी आंतरिक रचना के चित्र को देखने से मालूम होगा कि उसके भीतर श्लेष्मल कला में, जो सारे आंत्र को भीतर से आच्छादित किए हुए हैं, गहरी सिलवटें बनी हुई हैं, जिससे कला का पृष्ठ आंत्र से कहीं अधिक हो जाता है। कला की सिलवटों पर अंकुर लगे रहते हैं। इन सबका काम अवशोषण करना है। अंकुरों की सूक्ष्म रचना भी ध्यान देने योग्य है। प्रत्येक अंकुर के बीच में एक श्वेतनलिका उसके शिखर के पास तक चली गई है। यह आक्षीरवाहिनी (lacteal) है। इसके दोनों ओर काली रेखाएँ दिखाई देती हैं, जो धमनी और शिराओं की शाखाएँ और कोशिकाएँ हैं। ये दोनों प्रकार की रचनाएँ, वाहिनियाँ और धमनी तथा शिराएँ, बाहर या नीचे जाकर अधोश्लेष्मिक स्तर में बड़ी रक्तवाहिकाओं और वाहिनियों में मिल जाती हैं। वसा का श्लेष्मलकला द्वारा अवशोषण होकर वह आक्षीरवाहिनियों में पहुँच जाती है और अंत में रक्त में मिल जाती है। ग्लूकोज़ और प्रोटीन का अवशोषण होकर वे रक्तकेशिकाओं द्वारा रक्त में पहुँच जाते हैं। रक्त इन तीनों अवयवों को शरीर के प्रत्येक अंग की कोशिकाओं तक पहुँचाता और उनका पोषण करता है। 20-22 फुट लंबी क्षुदांत्र की नली का यही विशेष कार्य है।

- **वृहदांत्र में-**

बृहदांत्र का कार्य केवल अवशोषण है। यह अंग विशेषतया जल का अवशोषण करता है। मलत्याग के समय मल जिस रूप में बाहर निकलता है, वह बृहदांत्र के अंत और मलाशय में बन जाता है। 24 घंटे में बृहदांत्र जल का अवशोषण कर लेता है। जल के अतिरिक्त वह थोड़े ग्लूकोज़ का भी अवशोषण करता है, पर और किसी पदार्थ का अवशोषण नहीं करता। इसके अतिरिक्त लोह, मैग्नीशियम, कैलसियम आदि शरीर का त्याग बृहदांत्र ही में करते हैं। यहाँ उनका उत्सर्ग होकर वे मल में मिल जाते हैं।

जीवाणुओं की क्रिया से भी पाचन में सहायता मिलती है। क्षुदांत्र में वे प्रोटीन, वसा तथा स्टार्च आदि का भंजन करते हैं। बृहदांत्र में वे सेलुलोज़ का भी, जिसपर किसी पाचक रस की क्रिया नहीं होती, भंजन कर डालते हैं। इसी से हाइड्रोजन सल्फाइड, मिथेन आदि गैसें उत्पन्न होती हैं तथा वसा के भंजन से वसाम्ल बनते हैं, जिनके कारण मल की क्रिया आम्लिक हो जाती है।

- **आंत्रगति अथवा क्रमाकुंचन (Peristalsis)-**

यह गति सारे पाचक नाल में, ग्रासनाल से लेकर मलाशय तक, होती रहती है, जिससे खाया हुआ या पाचित आहार निरंतर अग्रसर होता जाता है। अन्य आशयों में तथा वाहिकाओं में भी यह गति होती है।

आंत्रनाल में श्लेष्मल स्तर के बाहर वृत्ताकार और उनके बाहर अनुदैर्ध्य पेशीसूत्रों के स्तर स्थित हैं। वृत्ताकार सूत्रों के संकोच से नाल की चौड़ाई संकुचित हो जाती है। अतएव संकोच से आगे के आहार का भाग पीछे को नहीं लौट सकता। तभी अनुदैर्ध्य सूत्र संकोच करके नाल के उस भाग की लंबाई कम कर देते हैं। अतएव आहार आगे को बढ़ जाता है। फिर आगे के भाग में इसी प्रकार की क्रिया से वह और आगे बढ़ता है। यही आंत्रगति कहलाती है। दूसरी खंडीभवन (segmentation) गति भी नाल की भित्ति में होती रहती है। ये गतियाँ आहार को आगे बढ़ाने में सहायता देने के अतिरिक्त, भली प्रकार से काइम को मथ सा देती हैं, जिससे पाचक रस और आहार के कणों का घनिष्ठ संपर्क हो जाता है।

भिन्न भिन्न पाचक रसों की क्रिया का जो वर्णन किया गया है उससे स्पष्ट है कि प्रकृति ने ऐसा प्रबंध किया है कि आहार पदार्थों के सब अवयव, जो जांतव शरीर में भी उपस्थित रहते हैं, व्यर्थ न जाने पाएँ। उनका जितना भी अधिक से अधिक हो सके, शरीर में उपयोग हो। उनसे शरीर के टूटे फूटे भागों का निर्माण हो, नए ऊतक (tissues) भी बनें और काम करने की ऊर्जा उत्पन्न हो। आहार का यही प्रयोजन है और आहार के भिन्न अवयवों का उनके अत्यंत सूक्ष्म तत्वों में विभंजन कर देना, जिससे उनका अवशोषण हो जाय और शरीर की कोशिकाएँ उनसे अपनी आवश्यक वस्तुएँ तैयार कर लें, यही पाचन का प्रयोजन है। वास्तव में जिसको साधारण बोलचाल में पाचन कहा जाता है, उसमें दो क्रियाओं का भाव छिपा रहता है, पाचन और अवशोषण। पाचन केवल आहार के अवयवों का अपने घटकों में टूट जाना है, जो पाचक रसों की क्रिया का फल होता है। उनका अवशोषण होकर रक्त में पहुँचना दूसरी क्रिया है, जो क्षुदांत्र के रसांकुरों का विशेष कर्म है।

- **मल और मलत्याग-**

आहार का जो कुछ भाग पचने तथा अवशोषण के पश्चात् आंत्र में बच जाता है वही मल होता है। अतएव मल में आहार का कुछ अपच्य भाग भी होता है तथा आंत्र की श्लेष्मल कला के टुकड़े होते हैं। इनके अतिरिक्त जीवाणुओं की बहुत बड़ी संख्या होती है। यह हिसाब लगाया गया है कि प्रत्येक बार मल में 15,00,00,00,000 जीवाणु शरीर से निकलते हैं। ये बृहदांत्र से ही आते हैं। वही जीवाणुओं का निवासस्थान है। इस कारण मल में नाइट्रोजन की बहुत मात्रा होती है, जिससे उसकी उत्तम खाद बनती है।

मलत्याग की एक प्रतिवर्त क्रिया है, जिसका संपादन तांत्रिक मंडल के आत्मग विभाग (autonomous nervous system) द्वारा होता है। जब मलाशय में मल एकत्र हो जाता है

तो नियत समय पर मलाशय की भित्तियों से मेरुज्जू (spinal cord) के पश्चिमशृंगों (posterior horn cells) की कोशिकाओं में संवेग (impulses) जाते हैं, जहाँ से वे पूर्वशृंगों की कोशिकाओं में भेज दिए जाते हैं। वहाँ से नए संवेग प्रेरक तांत्रिक सूत्रों द्वारा मलाशय में पहुँचकर, वहाँ की संवर्णी (sphincter) पेशियों का विस्तार कर देते और मलाशय की भित्तियों की आंत्रगति बढ़ा देते हैं। इसी समय हमको मलत्याग की इच्छा होती है और हमारे बैठने पर तथा सँवरणी पेशियों के ढीली हो जाने पर मलत्याग हो जाता है। ऊपर की पेशियों के संकोच करने पर उदर के भीतर की दाब बढ़ने से भी मलत्याग में बहुत सहायता मिलती है।